विपश्यना

[साधकों का मासिक प्रेरणापत्र]

रजि. नं. १९१५६/७१

पोस्टल रजि. नं. (M) NS (C) 36

वर्ष ११ • बम्बई • बुद्धवर्ष २५२५ • पौष पूर्णिमा [शक] • दि. ९-१-१९८२ • अंक ७

प्रवचन-प्रवाह

पहला दिन

आज हमारी साधनाका पहला दिन पूरा हुआ। पहला दिन थोड़ा कठिनाइयोंका होता है। एक छोटासा कारण शिविरकी व्यवस्थासे संबंधित है। नए-नए साधकोंको शिविरकी व्यवस्थामें कई असुविधाएँ अनुभव होती हैं। केवल रहन-सहनकी ही नहीं, शरीरने भी अपना स्वभाव बना लिया है, मनने भी। अपने स्वभावके बाहर निकलना न शरीरको पसंद है, न मनको। शरीर और मन दोनों विद्रोह करने लगते हैं।

मनमें कई शंकाएँ पैदा होती हैं। कोई साधक किसी अमुक साधना या ध्यानका अभ्यासी है तो मनमें विचार आता है कि यहाँ मैं क्या कर रहा हूँ? कहीं कोई धर्म-विरोधी कार्य तो नहीं कर रहा? इत्यादि.....

प्रत्येक साधकको यह खूब समझ लेना चाहिए कि इस साधनामें कहीं भी अंध-विश्वास या कल्पनाको स्थान नहीं है। सारा का सारा बोधिका मार्ग है, सत्यका मार्ग है, ज्ञानका मार्ग है। स्वयं तपनेका मार्ग है। पुरुषार्थका मार्ग है।

परन्तु हर शामको धर्म-चर्चा होगी— साधना-मार्गका स्पष्टीकरण करने एवं साधना-विधिको समझानेके लिए। पहले तो हम यह समझेंगे कि इस साधनाका लक्ष्य क्या है? साधनाका लक्ष्य चित्तको पूर्णरूपसे निर्मल करना है, शुद्ध करना है। इसका पहला कदम चित्तको एकाग्र करना है। लक्ष्यकी ओर जानेकी यह पहली सीढ़ी है।

इस साधनाके द्वारा हम सुख एवं शांतिपूर्वक जीवन जीनेकी कला सीखेंगे।

हम अनुभव करते हैं कि हमारे जीवनमें कितना तनाव है, खिंचाव है, बेचैनी है, अशांति है, व्याकुलता है! हमारे पास सब साधन हों, सम्पत्ति हो, तो भी हम दुःखी रहते हैं। इनका अभाव है तो दुःखी हैं ही। मनका यह रोग सार्वजनीन है, सार्वकालिक है, सार्वदेशिक है।

यदि हम मनके इस रोगका कारण जान लें तो इसे दूर अवश्य कर सकेंगे। रोगका कारण मनके विकार हैं। यदि हमारा मन इन विकारोंसे मुक्त हो जाय, शुद्ध हो जाय, निर्मल हो जाय तो हम दुःखसे, अशांतिसे, बेचैनीसे अपने आप दूर हो जायेंगे। चित्तके निर्मल होने पर किसीके प्रति ईर्ष्या या द्वेष नहीं जागेगा। निर्मल चित्त प्यारसे, करुणासे, मुदितासे, समतासे भर-भर उठेगा। हमारा मन सदा संतुलित रहेगा। यही कल्याणका मार्ग है।

इस लक्ष्यको प्राप्त करनेके लिए हमने सांसको देखना शुरू किया। किस प्रकार हमारा सांस आ रहा है, जा रहा है। केवल यही देखना शुरू किया। इसके साथ किसी नाम, मंत्र या रूपको नहीं जोड़ा। इस साधनाका संबंध किसी संप्रदाय या मान्यतासे नहीं है। यदि हम किसी नाम, मंत्र या रूपको जोड़ देते तो उससे संबंधित संप्रदायसे बंध जाते। तब यह अभ्यास सबके लिए ग्राह्य तथा स्वीकार करने योग्य नहीं होता। सार्वजनीन रोगके लिए सार्वजनीन इलाज की ही आवश्यकता है। हमने इसीलिए शुद्ध सांसका सहारा लिया।

धम्म वाणी

इदं पुरे चित्तमचारि चारिकं
येनिच्छकं यत्थकामं यथासुखं।
तदज्जहं निग्गहेस्सामि योनिसो
हत्थिप्पभिन्नं विय अंकुसग्गहो॥

थेरगाथा - ७७,

यह जो चित्त पहले जहाँ रुचि हो, जहाँ सुख दिखे वहीं स्वच्छन्द विचरण करता रहा है, आज उसे मैं सावधानीपूर्वक अपने वशमें करूँगा; वैसे ही जैसे कि अंकुशधारी महावत दुर्द्धर्ष हाथीको वशमें कर लेता है।

एक और बड़ा कारण है। हमारे सांसका हमारे विकारोंसे गहरा संबंध है। जब-जब मनमें क्रोध जागे, भय जागे, वासना जागे, हमारे सांसकी गति तेज हो जायेगा। जैसे ही विकार दूर हो जायेगा, सांस फिर अपने आप धीमा और अपनी साधारण गतिसे चलने लगेगा। सांसको देखते-देखते हम अपने विकारोंको देख सकेंगे। ज्यों ही हमने विकारोंको देखना शुरू किया चित्तकी सफाईका काम शुरू हो गया। विकारोंको जाननेके लिए सांसका माध्यम अत्यंत महत्व का है। इसके साथ यदि हम किसी नाम, मंत्र या रूपको जोड़ देते तो सांस अपनी जगह रह जाता और मन उस शब्दकी गूंजमें, उसे बार-बार उच्चारण करनेमें या उस रूपकी कल्पनामें डूब जाता। मन एकाग्र तो हो जाता, शांति भी मिलती लेकिन हम अपने विकारों तक नहीं पहुच पाते। यदि हमें अपने विकारोंको देखना है, मनकी अन्तरतम गहराइयों तक पहुँचना है; जहाँ हमारे विकार एकत्र हैं, संग्रहित हैं तो हमें बीचमें कोई दीवार नहीं खड़ी करनी है। विकारोंसे सीधा संपर्क आवश्यक है। इसीलिए हमने शुद्ध सांसका सहारा लिया। ताकि विकारोंको दूर कर सकें।

मनुष्यने जबसे जन्म लिया है, आँख खोलकर बाहरी दुनियाको ही देखा है। सदैव बहिर्मुखी ही बहिर्मुखी। कभी अन्तर्मुखी होकर अपने को देखा ही नहीं। यह सारा शरीर प्रपंच जिसे 'मैं – मैं','मेरा-मेरा' कहे जा रहा हूँ, यह सारा मानासक प्रपंच जिसे 'मैं-मैं,' 'मेरा-मेरा' कहे जा रहा हूँ-- यह सब क्या है? अपने शरीरके बारेमें, मनके बारेमें बौद्धिक स्तर पर खूब जानकारी होगी लेकिन अनुभूतियोंके स्तर पर कुछ भी ज्ञान नहीं है। अनुभूतियोंके द्वारा यह भी नहीं जाना कि शरीर और चित्तके परे भी कोई अवस्था है।

सत्यकी खोजमें निकलनेवाला साधक किसी कल्पनाको स्थान नहीं देगा। यह जो हमने सांसका सहारा लिया और इसके साथ किसी कल्पनाको जोड़ने नहीं दिया, इसका मुख्य कारण यही है कि हम सच्चाईको जान रहे हैं-- 'मैं सांस ले रहा हूँ।' भले ही यह एक मोटा सत्य है पर है सत्य! कोई कल्पना नहीं!

हम अपने शरीर और मनके प्रपंचको देखेंगे। खूब देखेंगे। हमारे विभिन्न बाहरी अंग-हाथ, पैर, आँख आदि हमारी इच्छाके अनुसार काम करते हैं। लेकिन शरीरके भीतरके जो अंग हैं– फेफड़े, हृदय आदि हमारे आदेशका इंतजार नहीं करते। निरन्तर प्रकृतिके नियमके अनुसार काम करते रहते हैं। इनके अतिरिक्त हमारा सारा शरीर जो नन्हें-नन्हें परमाणुओंसे, जीव-कोषोंसे बना है; उनमें कुछ न कुछ खटपट होती ही रहती है। समग्र शरीर-पिंडमें कुछ न कुछ जीव-रसायनिक प्रतिक्रिया, विद्युत-चुम्बकीय प्रतिक्रिया निरन्तर होती रहती है। वह सच्चाई अनुभूतिसे जानेंगे।

शरीरके बारेमें सुना है, शास्त्रोंमें पढ़ा है कि यह नश्वर है, भंगुर है। मनके बारेमें भी सुना है कि यह चंचल है, चपल है। लेकिन अनुभूतिके स्तर पर यह बात नहीं जानी। इसीलिए शरीर और मनके प्रति बड़ी आसक्ति है। यह आसक्ति केवल बौद्धिक-स्तरकी जानकारीसे टूटनेवाली नहीं है। इसलिए हमारे यहाँ सत्यके साक्षात्कारको इतना महत्व दिया गया। सत्यको ही ईश्वर माना गया।

सत्यका साक्षात्कार स्थूलसे ही आरम्भ होता है और सूक्ष्मसे सूक्ष्मतर और सूक्ष्मतरसे सूक्ष्मतम होता हुआ परम सत्य तक पहुँच जाता है। यदि हमें परम सत्यका साक्षात्कार करना है; जो अवस्था इंद्रियातीत है, भवातीत है, लोकातीत है वहाँ तक पहुंचना है तो हमें इंद्रिय जगतके क्षेत्रकी स्वयं यात्रा करके अनुभूतियोंके क्षेत्रसे गुजरना ही पड़ेगा।

आज दिन भर अभ्यास करते-करते एक बात बड़ी स्पष्ट हो गई। मनकी चंचलताके बारेमें खूब सुना था, पढ़ा था। अब अनुभव हो गया कि मन एक क्षण भी नहीं टिकता। मनकी चंचलताके साथ एक और बात स्पष्ट हुई कि या तो यह भूतकालकी यादमें भागता है अथवा भविष्यकी कल्पनाकी ओर। एक क्षण भी वर्तमानमें नहीं रहना चाहता। मन की इस प्रकारकी गति इसका स्वभाव बन गई है। जीवन भर हम या तो भूतकालकी सुखद या दुःखद स्मृतियोंमें अथवा भविष्यकी सुखद या दुःखद कल्पनाओंमें खोए रहते हैं। इसीसे असंतुष्ट, असंतुलित और बेचैन रहते हैं।

साधनाके अभ्यास द्वारा आरम्भ हुआ वर्तमानमें जीनेका कार्य। मनको सिखाने लगे कि देख इस सांसको– "जो आ रहा है या जा रहा है।" यह इस क्षणकी घटना, इस क्षणकी सच्चाई है। मनको सिखाने लगे कि भूतकालकी स्मृतियों और भविष्यकी आकांक्षाओंसे हटकर वर्तमानमें रहना सीख। ज्योंही वर्तमानमें रहना आने लगेगा, बहुतसे रहस्य सामने आयेंगे। जैसे-जैसे हम स्थूलसे सूक्ष्मकी ओर चलेंगे, ज्ञातसे अज्ञातको भी जानने लगेंगे। इस प्रयत्नमें सांस एक कड़ीका काम करेगा, एक पुलका काम करेगा।

मनके बारेमें एक बात और सामने आयी कि मन कभी एक बात पर नहीं टिकता। कभी एक बात तो कभी दूसरी बात। सो भी ऐसी बातें जिनका परस्पर कोई तारतम्य नहीं, तालमेल ही नहीं! केवल उलझन ही उलझन है। मानो होश ही नहीं है।

इस प्रकार मनका एक और रहस्य स्पष्ट होने लगा। जब कभी मन सुखद स्मृतिकी कल्पनामें डूबा रहता है तो बड़ी चाह रहती है कि वह स्मृति कायम रहे, वह स्थिति पुनः प्राप्त हो। इसी प्रकार दुःखद कल्पना और दुःखद स्थिति को हमेशा टालनेकी चाह रहती है। ये राग, द्वेष और मोह-मूढ़ता (बेहोशी) की स्थितियाँ बनी ही रहती हैं। कहाँ शांति है? कहाँ सुख है जीवन में? हमारे मनके सारेके सारे विकारोंकी जननी ये तीनों अवस्थाएँ हैं – राग, द्वेष और मोहकी।

यह सारा अभ्यास हमें चित्तकी निर्मलताकी ओर ले जानेवाला है। इसमें पहला कदम चित्तको एकाग्र करनेका है। यह कदम भी थोड़ा-बहुत मैल उतारनेवाला होना ही चाहिए।

कैसे ? हम केवल सांसको देख रहे हैं, जान रहे हैं तो हमारा संबंध भूतकालकी स्मृतियों और भविष्यकी कल्पनाओंसे टूट रहा है। एक तरहसे राग और द्वेषसे टूट रहा है। यथाभूत सांसको देखनेमें कहाँ राग पैदा होगा ? कहाँ द्वेष पैदा होगा ? जो सांस अपने स्वभावसे चल रहा है उसे शांतिसे, दृढ़तासे देख रहे हैं। उस क्षण हम मोहसे भी दूर हैं। क्योंकि किसी कल्पनामें नहीं उलझ रहे। दिन भरके अभ्यासमें कुछ क्षण ऐसे आते ही हैं जब हम केवल सांसको देख रहे हैं। ये क्षण बड़े महत्वके हैं। उस क्षणका चित्त निर्मल हुआ।

इसी प्रकार एक और रहस्य प्रकट होता है। जब हमारे अंतर-तममें संग्रहित विकार-समूहसे निर्मल चित्तका संपर्क होता है तो बड़ी तीव्र प्रतिक्रिया होती है। एक तूफानसा उठता है, ज्वालामुखी सा फूटता है। मन और शरीरका गहरा संबंध है। अतः यह प्रतिक्रिया शरीरमें प्रकट होती है। किसीका पांव टूटने लगता है तो किसीकी कमर फटने लगती है। किसीका सिर चकराता है तो किसीका जी घबराता है। किसीका भाग जानेका मन करता है तो किसीको नींद ही आने लगती है। यह सब क्यों होता है ? हमारा अभ्यास चित्तको अपने स्वभावसे पलटनेका प्रयास है। यह प्रतिक्रिया इस प्रयासके विरुद्ध होती है। इन पीड़ाओंका बड़ा कारण मनकी विपरीत प्रतिक्रियाका शरीरपर प्रकटीकरण है। जैसे-जैसे हम अपने अभ्यासमें पुष्ट होते जायेंगे, ये प्रतिक्रियाएँ कम होने लगेंगी। धीरे-धीरे हमारे मनमें जो विकार इकट्ठे कर रखे हैं, उनका शमन होने लगेगा। उन्हें धोते चले जायेंगे, साफ करते चले जायेंगे। यदि हम दृढ़ताके साथ साधनामें लगे रहेंगे तो इन प्रतिक्रियाओंको जड़से उखाड़ देंगे। चित्त स्वभावसे निर्मल हो जायेगा। हमें जीना आ जायेगा। सुखसे जियेंगे, शांतिसे जियेंगे। हम अपने भीतर शांतिका अनुभव करेंगे और जिन लोगोंके साथ हमारा संपर्क होगा, उन्हे भी शांत और सुखी करेंगे।

इस अभ्यासमें हमारे सामने कुछ कठिनाइयाँ आती हैं, उनसे सजग रहेंगे।

दस दिन तक इस साधनाका अभ्यास करते हुए किसी अन्य साधना या अभ्यासको इसके साथ नहीं जोड़ेंगे। ऐसा होने पर बड़ी हानि होनेकी आशंका है। भोजनमें संयम रखना भी अत्यंत आवश्यक है। जितना भोजन एक बारमें हम करनेके अभ्यस्त हैं, यहाँ उससे भी कम भोजन करेंगे। इससे साधना अच्छी हो पायेगी। इसी प्रकार प्रमादसे दूर रहेंगे। शारीरिक थकानको कम करनेके लिए भले हम एक बारमें पाँच मिनट लेटकर भी अभ्यास कर लें। लेकिन ऐसे न लेटें कि नींद ही आने लगे। एक अन्य कठिनाई, खासकर हम भारतीय साधकोंकी है। हमें बात करनेका बड़ा शौक है। मौन व्रत रखते हुए भी बात करनेकी बड़ी चाह रहती है। साधनाकी सफलताके लिए मौन, पूर्ण मौन, आर्य मौन रखना नितांत आवश्यक है।

साधना प्रारंभ करनेके पहले पंचशील पालन करनेका व्रत लिया। यह कोई कर्मकांड पूरा करनेके लिए नहीं है। इस व्रतका कड़ाईसे पालन करना है। ये शील हमारी साधनाकी आधार-शिलाएँ है। हमें शीलको पुष्ट करना है। शीलका दृढता एवं निष्ठासे पालन हमें सम्यक् एकाग्रता याने सम्यक् समाधि प्राप्त करने एवं प्रज्ञाको जगानेमें सहायक होगा। इससे चित्तके विकार निकलने शुरू होंगे और निर्मलता आने लगेगी।

कल्याण मित्र,
स. ना. गो.

(गुरुदेवके प्रवचनका श्री रामसिंह द्वारा संक्षिप्तीकरण।)

सुखद सूचना

"विपश्यना" साधनाकी ओर लोगोंकी अतीव बढ़ती हुई रुचिके परिणाम स्वरूप जगह-जगहसे शिविर लगवानेकी मांग बढ़ती जा रही है। केन्द्रों पर भी स्थान सीमित होनेके कारण सभी मुमुक्षुओंको स्वीकृति देनी संभव नहीं। [इगतपुरी के पिछले शिविर क्रमांक २०४ में लगभग २८० एवं शि. क्र. २०५ में लगभग २६० लोगोंको स्थान दिया गया। दोनोंमें ही लगभग ४००-४०० लोगोंने स्थान सुरक्षित करवाए थे परन्तु समय रहते उनकी ओरसे आरक्षण रद्द करवानेकी सूचना नहीं आने पर अनेक ऐसे लोगोंको वंचित रह जाना पड़ा, जो वस्तुतः सम्मिलित होना चाहते थे।]

सौभाग्यसे अब विद्यापीठमें लंबी अवधिके शिविर लगने लगे हैं और सहायक आचार्य तैयार किए जा रहे हैं। पुराने साधकोंमेंसे पके हुए कई भारतीय और विदेशी इस धर्म-सेवाके काममें लगे हैं और भविष्यमें धर्मसेवा देनेके लिए तत्पर हैं। पू. गुरुजी चाहते हैं कि ये शिविरोंके दौरान केवल आचार्यकी ही सहायता न करें बल्कि जगह-जगह जाकर पुराने साधकोंके लाभार्थ ३ या ५ दिनके लघु शिविरोंका अथवा दस दिनके पूर्ण शिविरका भी संचालन करें। अतः जिस क्षेत्रके साधक रुचिवान हों और इस प्रकारके लघु शिविर या बड़े शिविरके आयोजनके निमित्त साधन सुविधाएँ जुटा सकते हों, कृपया उपलब्ध स्थान एवं अनुकूल समय आदिका विवरण देते हुए पू. गुरुदेवको इगतपुरीके पतेपर सूचित करें ताकि सहायक आचार्योंकी सुविधानुसार उन्हें शिविरोंके संचालन हेतु भेजा जा सके !

भवतु सब्ब मंगलं !

साधकोंके उद्गार

बेतूलसे रामअवध वर्मा लिखते हैं. '.....मेरी मां जब साधना-शिविरसे वापस आयी तो भाव-विभोर हो यही बतलायी कि अब से १० साल पहले वह शिविरमें क्यों नहीं गयी, जबकि उसका बेटा याने मैं जा चुका था। वह नियमित ध्यान करती है। सारा कुछ इस शरीरमें ही है, यह जान चुकी है। अब वह रूढ़ कर्मकांडोंसे विरत है। सारे शरीरमें धारा-प्रवाह अनुभूतिको महसूस करने लगी है। पुलकसे भरी रहती है एक दिन उसके सिरमें दर्द उत्पन्न हुआ। मैंने सलाह दिया कि विपश्यनाके लिए बैठ ! दो घंटेमें वह दर्द-मुक्त थी। तबसे वह बिल्कुल हल्का महसूस करती है। ....."

भावी कार्यक्रम

शिविर क्रमांक २०६ * इगतपुरी दि. २०-१-८२ से ३१-१-८२ तक (हिन्दी)
,, ,, २०७ ,, ,, ३१-१-८२ से १०-२-८२ तक (अंग्रेजी)
* संपर्क : व्यवस्थापक, विपश्यना विश्व विद्यापीठ, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२४०३ (नासिक) फोन नं. इगतपुरी-७६
शिविर क्रमांक २०८ ● कलकत्ता (आमळागाछी धर्मशाळा) दि. २६-२-८२ से ९-३-८२ तक (हिंदी)
● संपर्क : श्री सुदर्शन ढंढारिया, ४८-डी, मुक्ताराम बाबू स्ट्रीट, कलकत्ता-७०० ००७. फोन : ३४४७९२
शिविर क्रमांक २०९ * विपश्यना अन्तराष्ट्रीय साधना केन्द्र, 'धम्मखेत्त', कुसुम नगर, १२·६ कि. मि., नागार्जुन सागर रोड, हैदराबाद-५०० १०३. फोन : ५९२५९ दि. १८-३-८२ से २९-३-८२ तक (हिन्दी)
* संपर्क : १) श्रीमती उषाबेन पी. मेहता, ६१, श्रीनगर कॉलोनी, हैदराबाद-५०० ८७३. फोन : ३०२९१.
२) श्री पूरनमल अग्रवाल, द्वारा-होटल राजधानी, सिद्दिअम्बर बाजार, हैदराबाद-५०० ०१२. फोन : ५७५७१.
* अप्रैल में एक शिविर कैंडी (**श्रीलंका**) और मई में एक शिविर काठमांडू (**नेपाल**) में होंगे। तारीखें व संपर्क स्थान अगले अंक में।

सूचना : १) कृपया साधना शिविर में शामिल होने से पूर्व शिविर-व्यवस्थापक के पास अपना नाम रजिस्टर करा लें। **किसी कारणवश शिविर में सम्मिलित न हो सकते हों तो पर्याप्त समय रहते सूचित करें ताकि किसी अन्य प्रत्याशी को स्वीकृति दी जा सके।** २) अंग्रेजी शिविर में हिन्दी-प्रवचन सुनने के लिए हिन्दी टेप की सुविधा उपलब्ध रहती है। ३) शिविरों के नियम कड़े होते हैं। उनका कड़ाई से पालन कर सकें तो ही भाग लेना चाहिए।

फोन नं. : २९३३८८
मेसर्स सम्मा ट्रेडिंग कारपोरेशन
ग्रीन हाऊस, २ री मंजिल, ग्रीन स्ट्रीट,
फोर्ट, बम्बई-४०० ०२३.
की मंगल कामनाओंके सहित

दूहा धरम रा

मन चंचल मन चपल है, मन भागे सब ओर।
सांस डोर सूं बांधकर, रोक राख इक ठोर ॥
चित की चाल विचित्र है, झट नभ झट पाताल।
सांस सांस नै निरखतां, मन्द पड़ै चित चाल ॥
खूंटी कर ली नासिका, करी सांस की डोर।
चंचल चित रो बांदरो, बांध लियो ई ठोर ॥
आतै जातै सांस को, र वै निरन्तर ध्यान।
तो साचो मंगल सधै, सध ज्यावै कल्याण ॥
सांस देखतां देखतां, चित अवचल हो जाय।
अवचल चित निरमल हुवै, सहज मुक्त हो जाय ॥
सांस देखतां देखतां, सत्य प्रकटतो जाय।
सत्य देखतां देखतां, परम सत्य दिख जाय ॥

दोहे धर्म के

आओ ! मानव मानवी, चलें धरम के पंथ।
इस पथ चलते विज्ञ जन, इस पथ चलते संत ॥
धर्म पंथ ही शांति पथ, धर्म पंथ सुख पंथ।
इस पथ पर चलते हुए, करें दुखों का अंत ॥
धर्म धर्म तो सब कहें, धर्म न समझे कोय।
निर्मल मनका आचरण, सत्य धर्म है सोय ॥
धर्म न मिथ्या मान्यता, धर्म न मिथ्याचार।
धर्म न मिथ्या कल्पना, धर्म सत्य का सार ॥
सम्प्रदाय ना धर्म है, धर्म न बने दिवार।
धर्म सिखाए एकता, धर्म सिखाए प्यार ॥
धर्म न हिन्दू बौद्ध है, धर्म न मुस्लिम जैन।
धर्म चित्त की शुद्धता, धर्म शांति सुख चैन ॥

सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट के लिए मुद्रक, प्रकाशक एवं संपादक : **रामप्रताप यादव**, ग्रीन हाऊस, २ री मंजिल, ग्रीन स्ट्रीट, फोर्ट, बंबई-२३. टेलीफोन : ३१३५१०. ● मुद्रण स्थान : अक्षरचित्र मुद्रणालय, सातपूर, नासिक-४२२ ००७. टेलिफोन : ८८२५१. ●
पत्रिका में विज्ञापन दर : आधा पृष्ठ रु. ५००/-, चौथाई पृष्ठ रु. २५०/- ● वार्षिक शुल्क रु. ५/-, आजीवन शुल्क रु. ५१/-

"विपश्यना"
पो. रजि. नं (M) NS (C) 36

Licence No. NS 18
Licensed to post without pre-payment

प्रेषक :
सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट
विपश्यना विश्व विद्यापीठ
धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२ ४०३.
(नासिक, महाराष्ट्र)

To